

ईश्वर दत्त

बनाम

भूमि अधिग्रहण संग्राहक और अन्य

02 अगस्त, 2005

(अशोक भान और एस.बी. सिन्हा, जे.जे.)

भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894

धारा 4 और 18- मुआवजा राशि पर ब्याज- रेस ज्यूडिकाटा-
विबंधन- सड़क निर्माण योजना सड़क निर्माण के लिए बड़ी संख्या में गांवों
की भूमि पर कब्जा भूमि अधिग्रहण के लिए औपचारिक रूप से कोई कदम
नहीं उठाया गया- जनहित याचिका दायर- उच्च न्यायालय ने अधिग्रहण
की कार्यवाही पूरी करने और याचिकाकर्ताओं को कब्जा लेने की तारीख से
लेकर अंतिम मुआवजे के भुगतान की तारीख तक, यदि वृद्धि हुई हो, पर
12 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से ब्याज का भुगतान करने का निर्देश दिया-
यह भी माना गया कि उपरोक्त देय ब्याज न्यायसंगत मुआवजे की प्रकृति
का था और ऐसा ब्याज मुआवजे, मुआवजे और वैधानिक दर पर ब्याज के

अतिरिक्त होगा- इसके बाद, धारा 4 के तहत अधिसूचना जारी की गई- भूमि अधिग्रहण कलेक्टर ने भूमि का बाजार मूल्य एक निश्चित दर पर तय किया- मुआवजे आदि के वैधानिक लाभों के अलावा, भूमि मालिकों को कब्जा लेने की तारीख से भुगतान की तारीख तक 12 प्रतिशत की दर से ब्याज भी दिया गया- भूमि मालिकों ने संदर्भ के लिए धारा 18 के तहत आवेदन दायर किया- जिला न्यायाधीश ने बढ़े हुए मुआवजे का आदेश दिया- पर अपील, उच्च न्यायालय ने मुआवजे की राशि को बकरार रखते हुए, पुनः उच्च न्यायालय के पहले के आदेश द्वारा दिए गए 12 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज के दावे को खारिज कर दिया- धारणा की शुद्धता: अतिरिक्त भुगतान का निर्देश देने वाले भूमि अधिग्रहण अधिकारी का पुरस्कार हित अंतिम रूप ले चुका था- इसलिए, रेस ज्यूडिकाटा का सिद्धांत पूरी तरह से तत्काल मामले के तथ्यों पर लागू होता है- इसलिए, उच्च न्यायालय के फैसले को रद्द कर दिया गया- सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908, धारा 11 भारत का संविधान, 1950 अनुच्छेद 226- रिट याचिका रेस ज्यूडिकाटा- सिद्धांत- प्रयोज्यता माना गया: रिट कार्यवाही पर लागू होता है।

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908

धारा 107 अपीलीय अदालत की शक्ति- क्षेत्र- आयोजित: हालांकि उच्च न्यायालय के पास धारा 107 के तहत व्यापक शक्ति है, लेकिन वह अभिवचनों से बाहर नहीं जा सकता था और कोई नया मामला नहीं बना

सकता। बड़ी संख्या में गांवों की भूमि के साथ- साथ अपीलकर्ताओं के स्वामित्व वाली भूमि का कब्जा वर्ष 1968 में एक सड़क निर्माण योजना के लिए ले लिया गया था, लेकिन भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 की धारा 4 के तहत एक अधिसूचना जारी करके औपचारिक रूप से भूमि अधिग्रहण के लिए कोई कदम नहीं उठाए गए, इसलिए उच्च न्यायालय के समक्ष एक जनहित रिट याचिका दायर की गई थी, जिसमें दिनांक 09.09.1985 के एक फैसले द्वारा उत्तरदाताओं को एक समय सीमा के अंदर अधिग्रहण की कार्यवाही पूरी करने का निर्देश दिया और आगे उन्हें रिट याचिकाकर्ताओं को कब्जा लेने की तारीख से लेकर अंतरिम मुआवजे और अंतिम मुआवजे के भुगतान की तारीख तक, यदि वृद्धि हुई हो, 12 प्रतिशत प्रतिवर्ष। ब्याज का भुगतान करने का निर्देश दिया। यह भी माना गया कि उपरोक्त देय ब्याज न्यायसंगत मुआवजे की प्रकृति का था और ऐसा ब्याज वैधानिक दर पर मुआवजे, मुआवजे और ब्याज के अतिरिक्त था।

इसके बाद, उत्तरदाताओं ने धारा 4 के तहत अधिसूचना जारी की। भूमि अधिग्रहण कलेक्टर ने 31.01.1991 को फिक्सिंग करते हुए एक पुरस्कार पारित किया।

एक निश्चित दर पर भूमि का बाजार मूल्य वैधानिक लाभ के अलावा सोलेटियम आदि के अलावा भूस्वामियों को उच्च न्यायालय के निर्देशानुसार कब्जा लेने की तारीख से भुगतान की तारीख तक 12 प्रतिशत प्रतिवर्ष की

दर से ब्याज भी दिया गया। भूमि अधिग्रहण कलेक्टर द्वारा निर्धारित बाजार मूल्य से व्यथित होकर, अपीलकर्ताओं ने अधिनियम की धारा 18 के तहत जिला न्यायाधीश के पास संदर्भ की मांग करते हुए एक आवेदन दायर किया। जिला न्यायाधीश ने बाजार मूल्य में वृद्धि की। अपील पर, उच्च न्यायालय ने बढ़े हुए बाजार मूल्य को बरकरार रखते हुए, उसी उच्च न्यायालय की खंडपीठ के पहले के आदेश द्वारा दिए गए 12 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से ब्याज के अपीलकर्ताओं के दावे को खारिज कर दिया, इसलिए याचिका दायर की गई।

उक्त अपील स्वीकार करते हुए न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया:

01. यह विवादित नहीं है कि उच्च न्यायालय ने मेंडमस की रिट जारी की। यह भी विवादित नहीं है कि उच्च न्यायालय के निर्देश पर कार्यवाही की गई थी। रेस ज्यूडिकाटा का सिद्धांत न केवल एक ही कारण से उत्पन्न होने वाली विभिन्न कार्यवाहियों में लागू होगा, बल्कि एक ही कार्यवाही के विभिन्न चरणों में भी लागू होगा। जैसे ही उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय दिनांकित 09.09.1985 को अंतिम रूप मिला, उत्तरदाता किसी भी वाद की कार्यवाही में उसके विपरीत या असंगत कोई विवाद नहीं कर सकते थे। वास्तव में भूमि अधिग्रहण अधिकारी ने निर्णय पारित करते समय दिनांक 09.09.1985 के उक्त निर्णय को ध्यान में रखा और बाजार मूल्य पर 12 प्रतिशत अतिरिक्त मुआवजा दिया। भूमि अधिग्रहण अधिकारी

के उक्त आदेश पर कभी सवाल नहीं उठाया गया और इस प्रकार, इसे अंतिम रूप दिया गया। (1911- डी- ई)

2.1 उत्तरदाता भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 की धारा 18 के तहत एक संदर्भित आवेदन दायर कर सकते थे, लेकिन उन्होंने ऐसा करने का विकल्प नहीं चुना। केवल अपीलकर्ता ने उक्त प्रावधान का सहारा लिया, जिसके परिणामस्वरूप उच्च न्यायालय का निर्णय पारित हुआ। (911- जी)

2.2 इस प्रकार, अतिरिक्त ब्याज के भुगतान का निर्देश देने वाले भूमि अधिग्रहण अधिकारी का निर्णय भी अंतिम हो गया है। (911- एच)

3. संदर्भित न्यायालय या उच्च न्यायालय उस मामले के लिए अधिनियम की धारा 54 के तहत अपने अपीलीय क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए उक्त प्रश्न से तय नहीं किया जा सकता था। रेस ज्यूडिकाटा का सिद्धांत एस्टापेल के सिद्धांत की प्रजाति है। जब किसी विशिष्ट वाद हेतुक कारण पर आधारित कार्यवाही अंतिम रूप ले लेती है, तो रेस ज्यूडिकाटा का सिद्धांत पूरी तरह से लागू होगा। (912- ए)

गुलाबचंद छोटेलाल पारिख बनाम गुजरात राज्य, एआईआर (1965) एससी 1153, पालन किया।

होप प्लांटेशंस लिमिटेड बनाम तालुक लैंड बोर्ड, पीरमेड और अन्य, {1999} 5 एससीसी 590, राम चंद्र सिंह बनाम सावित्री देवी और अन्य,

जेटी (2005) 11 एससी 439, स्वामी आत्मानंद और अन्य बनाम श्री रामकृष्ण तपोवनम और अन्य, जेटी (2005) 4 एससी 472, ईश्वरदास बनाम मध्य प्रदेश राज्य और अन्य, एआईआर, (1979) एससी 551, का आधार लिया गया।

हिमाचल प्रदेश बनाम धरम दास, एआईआर (1996) एससी 127, आरएल जैन बनाम डीडीए, (2004) 4 एससीसी 79, अर्नोल्ड बनाम नेशनल वेस्टमिंस्टर बैंक पीएलसी, (1991) 3 आल ईआर 41, से संदर्भ लिया गया।

वेड और फोर्सिथ: "प्रशासनिक कानून" 9 वां संस्करण, पी। 243 और जॉर्ज स्पेंसर बोवर और टर्नर: "द डॉक्ट्रिन आफ रेस ज्यूडिकाटा दूसरा संस्करण, से संदर्भ लिया गया।

04. यह अतिसामान्य बात है कि रेस ज्यूडिकाट का सिद्धांत रिट कार्यालयों पर भी लागू होता है। 1914- डी- ई

हिमाचल प्रदेश सड़क परिवहन निगम बनाम बलवंत सिंह (1993) 1 एससीसी 552 एससीसी 787, पर आधारित किया गया।

सत्यध्यान घोषाल और अन्य बनाम श्रीमती देवराजिन देबी और अन्य, एआईआर (1960) एससी 941 साइड किया गया।

05. मॅडमस की रिट का तब तक पालन करना आवश्यक है, जब तक कि किसी निर्णय को खारिज नहीं किया जाता है या वैध कानून के माध्यम से कानून लागू नहीं किया जाता है। (915- जी)

06. किसी भी सूरत में, न्यायालय द्वारा जारी निर्देशों का अनुपालन किया गया। अधिनियम की धारा 18 को ध्यान में रखते हुए या अन्यथा, वापसी नहीं की जा सकती है। (916- डी)

07. यद्यपि उच्च न्यायालय के पास सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 107 के संदर्भ में व्यापक शक्ति है, लेकिन वह दलीलों से बाहर जाकर कोई नया मामला नहीं बना सकता है। (916- एफ)

सिद्धू वेंकप्पा देवाडिगा बनाम श्रीमती रंगु एस. देवाडिगा और अन्य
(1977) 3 एससीसी 532

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील संख्या 443/2001

उच्च न्यायालय हिमाचल प्रदेश के आर.एफ.ए. 1993 की संख्या 104 साथ में सी.ए.सं. 490, 493, 492, 494, 489, 483, 484, 495, 485, 486, 491, 487 और 2001 का 488 में निर्णय और आदेश दिनांकित 20-12-1999 से।

चंद्र प्रकाश पांडे, अपीलार्थी की ओर से।

जे.एस.खत्री. अतिरिक्त, हिमाचल प्रदेश राज्य के महाधिवक्ता प्रतिवादी की ओर से अनिल नाग उत्तरदाता।

न्यायालय का निर्णय सुना गया।

भान जे.

दावेदार/अपीलकर्ता ने हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 20.12.1999 को पारित सामान्य/समान निर्णयों और आदेशों के खिलाफ व्यथित होकर सीडब्ल्यूपी नंबर में उसी उच्च न्यायालय की डिवीजन बेंच के पहले के आदेश द्वारा दिए गए 12 प्रतिशत ब्याज के उनके दावे को खारिज कर दिया। 510/85 दिनांक 09.09.1985 अपीलों के इन बैच में भूमि अधिग्रहण अधिनियम के तहत कार्यवाही किए बिना उन्हें उनकी भूमि से वंचित करने और मुआवजे के भुगतान पर न्यायसंगत विचार पर विचार किया गया है।

तथ्य सामान्य और समान होने के कारण इन अपीलों में शामिल विवाद पर निर्णय लेने के लिए 2001 के सीए नंबर 443 के तथ्यों को संदर्भित करना पर्याप्त होगा।

01.11.1966 को पंजाब राज्य के पुनर्गठन से पहले हिमाचल प्रदेश के कुछ क्षेत्र पूर्ववर्ती पंजाब राज्य का हिस्सा थे। पंजाब सरकार के लोक निर्माण विभाग ने वर्ष 1966 में सोलन- जवानजी- धारजा सड़क का

निर्माण कार्य शुरू किया। 1.11.1966 को राज्यों के पुनर्गठन के बाद हिमाचल प्रदेश के लोक निर्माण विभाग ने निर्माण कार्य अपने हाथ में ले लिया। इस सड़क को अंततः वर्ष 1968 में चालू किया गया था। सड़क को अंततः वर्ष 1968 में चालू किया गया था। अपीलकर्ताओं के स्वामित्व वाली भूमि, जिसमें ग्राम बागुर, तहसील और जिला सोलन में स्थित खसरा नंबर 102/1 शामिल है, के साथ-साथ उक्त के अंतर्गत आने वाले बड़ी संख्या में गांवों की भूमि का कब्जा सड़क निर्माण योजना वर्ष 1968 में अधिग्रहीत की गई थी। यद्यपि भू-स्वामियों से भूमि का कब्जा दिसंबर, 1968 में ले लिया गया था, लेकिन भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 4 के तहत अधिसूचना जारी करके औपचारिक रूप से भूमि अधिग्रहण के लिए कोई कदम नहीं उठाया गया। सन् 1894 को इसे "अधिनियम" के रूप में संदर्भित किया गया है। लगभग 17 वर्षों से भूमि अधिग्रहण के लिए सरकार द्वारा कोई मुआवजा या यहां तक कि कदम उठाने में न्याय पाने में विफल रहने के कारण 1985 की एक जनहित रिट याचिका संख्या 510 जिसका शीर्षक चंद्र कांत शर्मा और अन्य बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य, दायर किया गया था। हिमाचल प्रदेश राज्य भूमि अधिग्रहण को प्राप्त करने के लिए कदम नहीं उठाने और भूमि मालिकों को कोई मुआवजा नहीं देने के लिए कोई वैध कारण बताने में विफल रहा। रिट याचिकाकर्ताओं की शिकायत को वास्तविक पाते हुए उच्च न्यायालय ने अपने निर्णय दिनांकित 09.09.1985 द्वारा उत्तरदाताओं को एक समय सीमा के भीतर अधिग्रहण

की कार्यवाही पूरी करने का निर्देश दिया और साथ ही उन्हें रिट याचिकाकर्ताओं को 12 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज का भुगतान करने का भी निर्देश दिया। कब्जा लेने की तारीख से अंतरिम मुआवजे के भुगतान की तारीख तक और यदि वृद्धि हुई है तो अंतिम मुआवजे की तारीख तक। यह देखा गया कि देय ब्याज उपरोक्त न्यायसंगत मुआवजे की प्रकृति में था और ऐसा ब्याज वैधानिक दर पर मुआवजे, मुआवजे और ब्याज के अतिरिक्त होगा जो कि कानून के तहत रिट याचिकाकर्ताओं को भुगतान किया जाएगा चाहे वह कलेक्टर द्वारा दिया गया हो या न्यायालय द्वारा बढ़ाया गया और वैधानिक मुआवजा (दिशा संख्या 3) प्रदान करते समय अधिनियम के तहत किसी भी कार्यवाही में इस तरह के ब्याज पर विचार नहीं किया जाएगा। डिवीजन बेंच ने रिट याचिकाकर्ताओं को शीघ्र राहत के लिए निम्नलिखित निर्देश दिए:

“1. सेर चिराग, तवा तलारा और गैटूल गांवों के संबंध में अधिग्रहण की कार्यवाही 31 जनवरी, 1986 को या उससे पहले पूरी की जाएगी और गांव देओन धार में भूमि की स्थिति के संबंध में अधिग्रहण की कार्यवाही 30 जून, 1986 को या उससे पहले पूरी की जाएगी।

2. याचिकाकर्ताओं को अधिनियम के तहत कार्यवाही के दौरान कानून के अनुसार उनके कारण मुआवजे का दावा

करने के उनके अधिकारों और तर्कों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, अंतरिम मुआवजे के रूप में भुगतान किया जाएगा, जिसके आधार पर राशि निर्धारित की जाएगी। अधीक्षण अभियंता और भूमि अधिग्रहण अधिकारी के हलफनामे के साथ संलग्न सारणीबद्ध रूप में बयानों के कॉलम नंबर 9 में निर्धारित अस्थायी बाजार मूल्य। याचिकाकर्ताओं को उपरोक्त स्थिति समझाने के बाद अंतरिम मुआवजे का भुगतान उनके द्वारा अंतिम मुआवजे के भुगतान को स्वीकार करते हुए निष्पादित की जाने वाली रसीद के आधार पर किया जाएगा, जिसके वे कानून के अनुसार हकदार हैं। भुगतान आज से चार सप्ताह की अवधि के भीतर किया जाएगा।

3. याचिकाकर्ताओं को देय मुआवजे की राशि पर, कब्जा लेने की तारीख से लेकर अंतरिम मुआवजे और अंतिम मुआवजे के भुगतान की तारीख तक, यदि कोई हो, 12 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से ब्याज का भुगतान किया जाएगा। वृद्धि। तदनुसार देय ब्याज एक न्यायसंगत मुआवजे की प्रकृति में है और ऐसा ब्याज वैधानिक दर पर मुआवजे, सांत्वना और ब्याज के अतिरिक्त होगा जो कानून के तहत याचिकाकर्ताओं को भुगतान किया जाएगा, चाहे कलेक्टर

द्वारा बढ़ाया गया हो। वैधानिक मुआवजा देते समय अधिनियम के तहत किसी भी कार्यवाही में न्यायालय और इस तरह के हित पर विचार नहीं किया जाएगा।

4. अधीक्षण अभियंता और भूमि अधिग्रहण कलेक्टर के हलफनामे के साथ संलग्न सारणीबद्ध विवरण अन्य ग्यारह गांवों में भूमि की स्थिति से संबंधित अपेक्षित जानकारी देता है, जिसे प्रश्न में सड़क के निर्माण के प्रयोजनों के लिए कब्जा कर लिया गया है। जिन भू-स्वामियों की उन गांवों की जमीन पर कब्जा कर लिया गया है, वे भी इसी तरह के व्यवहार के हकदार होंगे। इन परिस्थितियों में, याचिकाकर्ताओं के समान स्थिति वाले व्यक्तियों के साथ समान व्यवहार सुनिश्चित करने के लिए और सीमा के प्रसार से बचने के लिए, यह निर्देश देना उचित प्रतीत होता है कि उन भूमि मालिकों को, जिनकी भूमि उन ग्यारह गांवों में स्थित है। विचाराधीन सड़क के निर्माण के प्रयोजनों के लिए भी कब्जा कर लिया गया है, वे भी याचिकाकर्ताओं के समान आधार पर अंतरिम मुआवजे और न्यायसंगत मुआवजे के भुगतान के हकदार होंगे और उन मामलों में भी, अधिग्रहण की कार्यवाही की जाएगी जैसा भी मामला हो,

31 जनवरी 1986 और 30 जून, 1986 को या उससे पहले पूरा किया जाना चाहिए, यह इस बात पर निर्भर करता है कि अधिनियम की धारा 4 के तहत अधिग्रहण की कार्यवाही शुरू की गई है या नहीं।”

चूंकि रिट जनहित याचिका में दायर की गई थी, निर्देश संख्या 4 में न्यायालय द्वारा यह आदेश दिया गया था कि वे सभी भूमि मालिक जिनकी भूमि किसी भी पुरस्कार में कब्जा कर ली गई थी, समान राहत के हकदार होंगे।

कुछ अन्य याचिकाकर्ताओं ने 1986 की सीडब्ल्यूपी संख्या 125 और 1988 की सीडब्ल्यूपी संख्या 147 दायर की जिनका भी समान निर्देशों के साथ निपटारा किया गया।

उच्च न्यायालय द्वारा उनके आदेश दिनांक 09.09.1985 में जारी निर्देशों के परिणामस्वरूप, उत्तरदाताओं ने ग्राम बागुरे के लिए अधिनियम की धारा 4 के तहत अधिसूचना जारी की। जो कि अधिसूचना संख्या लोक- निर्माण (ख)- 7(1)/62/88 दिनांकित 25-02-1989 एचपी के माध्यम से राजपत्र दिनांक 15.4.1989 में प्रकाशित की गई। भूमि अधिग्रहण कलेक्टर ने भूमि अधिग्रहण की औपचारिकताएं पूरी की और अंततः अपने अवार्ड नंबर 27/1990 दिनांक 31.01.1991 द्वारा भूमि का बाजार मूल्य रुपये तय किया। 9,727 प्रति बीघा सोलेटियम आदि के

वैधानिक लाभों के अलावा, भूमि- मालिकों को कब्जा लेने की तारीख से भुगतान की तारीख तक 12 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से ब्याज भी दिया गया, जैसा कि डिवीजन बेंच ने अपने आदेश दिनांक 09.09.1985 में न्यायसंगत बताया था।

भूमि अधिग्रहण कलेक्टर द्वारा निर्धारित बाजार मूल्य से व्यथित होकर अपीलकर्ताओं ने अधिनियम की धारा 18 के तहत जिला न्यायाधीश के पास उक्त संदर्भित मांग करते हुए एक आवेदन दायर किया। जिला न्यायाधीश, सोलन ने अपने निर्णय दिनांक 01.09.1992 द्वारा मुआवजे को बढ़ाकर रुपये 45,000 प्रति बीघा यह माना गया कि भूमि मालिक उक्त रुपये की दर से मुआवजे के हकदार थे। 45,000 प्रति बीघा और वे इसके भी हकदार होंगे।

“(ए) ऊपर निर्धारित बाजार मूल्य पर 30 की दर से अनिवार्य अधिग्रहण शुल्क

(बी) 1894 के अधिनियम की धारा 4 के तहत अधिसूचना की तारीख से, यानी 07.05.1989 से, पुरस्कार की तारीख यानि 31.1.1991 तक, ऊपर निर्धारित बाजार मूल्य पर 12 प्रति वर्ष की दर से अतिरिक्त अनिवार्य अधिग्रहण।

(सी) सीडब्ल्यूपी संख्या 147/1988 में माननीय उच्च न्यायालय के आदेशों के संदर्भ में 18.12.1968 से मुआवजे के भुगतान की तारीख तक उपरोक्त निर्धारित मुआवजे पर 12 प्रति वर्ष की दर से ब्याज।

(डी) कब्जे की तारीख, यानी 18.12.68 से उसके बाद एक वर्ष की समाप्ति की तारीख, यानी 17.12.1969 तक बढ़े हुए मुआवजे पर 9 प्रति वर्ष की दर से ब्याज।

(ई) 18.12.1969 से न्यायालय में राशि के भुगतान की तिथि तक बढ़ी हुई राशि पर 15 प्रति वर्ष की दर से ब्याज।”

उत्तरदाताओं ने उक्त पुरस्कार से व्यथित और असंतुष्ट होकर अधिनियम की धारा 54 के तहत उच्च न्यायालय के समक्ष प्रथम अपील दायर की, जिसे 1993 की नियमित प्रथम अपील संख्या 104 के रूप में चिह्नित किया गया था। आक्षेपित निर्णय के कारण, उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ उच्च न्यायालय ने भूमि के अधिग्रहण के लिए अपीलकर्ता को देय मुआवजे की राशि को बरकरार रखते हुए पुरस्कार के उस हिस्से को रद्द कर दिया, जो हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य बनाम में इस न्यायालय के निर्णय पर या उसके आधार पर निर्भर माना जाता है। धरम दास, एआईआर (1996) एससी 127, केवल 07.05.1989 से या अधिनियम की

धारा 4(1) के तहत अधिसूचना के प्रकाशन की तारीख से ब्याज के भुगतान का अनुपालन कर रहे हैं, न कि 18.12.1968 से।

धरम दास, (सुप्रा) में हिमाचल प्रदेश राज्य ने 1986 के सीडब्ल्यूपी नंबर 125, हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य बनाम धरम दास में दिए गए फैसले के खिलाफ अपील दायर की थी, जिसमें उसी निर्देश के समान है जो 1985 के सीडब्ल्यूपी नंबर 510 में चंद्रकांत शर्मा व अन्य बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य जरिये सचिव व अन्य में दिया गया था। उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण को मंजूरी नहीं दी और यह मानते हुए एक विपरीत दृष्टिकोण अपनाया गया कि अधिनियम की धारा 23 (1- ए) के तहत या अधिनियम के किसी भी प्रावधान के तहत परिकल्पित राशि के अलावा अन्य राशि न्यायसंगत आधार पर नहीं दिया जा सकता।

प्रस्तुतियाँ:

अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि प्रतिवादियों द्वारा की गई अपील मुआवजे की मात्रा तक ही सीमित थी, चूंकि उन्होंने सीडब्ल्यूपी में पारित उच्च न्यायालय के दिनांक 09.09.1985 के आदेश पर सवाल नहीं उठाया था। 1985 का 510, आक्षेपित निर्णय कायम नहीं रखा जा सकता।

विद्वान वकील का तर्क है कि इस मामले में किसी भी दृष्टिकोण से धरम दास, (सुप्रा) के इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा नहीं किया जा सकता था, क्योंकि रेस ज्यूडिकाटा के सिद्धांत को वर्तमान मामले के तथ्य आकर्षित करते हैं और इसके अलावा मामले के तथ्य को ध्यान में रखते हुए उक्त आदेश पर कार्यवाही की गई है।

तथापि, प्रतिवादी की ओर से उपस्थित विद्वान वकील ने फैसले का समर्थन किया और कहा कि कब्जे की तारीख पर कोई ब्याज नहीं दिया जा सकता है। इस संबंध में रिलायंस आरएल जैन (डी) बाय एलआर पर रखा गया है। वी. डीडीए और अन्य, (2004) 4 एससीसी 79।

जाँच- परिणाम:

यह विवादित नहीं है कि उच्च न्यायालय ने मेंडमस रिट जारी की तथा यह भी विवादित नहीं है कि उच्च न्यायालय के निर्देश पर कार्यवाही की गई, जैसा कि सर्वविदित है, पूर्व न्याय का सिद्धांत एक ही कार्यवाही से उत्पन्न होने वाली विभिन्न कार्यवाहियों में लागू होगा, लेकिन एक ही कार्यवाही के विभिन्न चरणों में भी लागू होगा। जैसे ही 1985 के सीडब्ल्यूपी संख्या 510 में पारित निर्णय और आदेश अंतिम रूप से प्राप्त हुआ, हमारी राय है कि यहां उत्तरदाता किसी भी बाद की कार्यवाही में इसके विपरीत या असंगत कोई विवाद नहीं उठा सकते थे। वास्तव में भूमि अधिग्रहण अधिकारी ने 31.01.1991 को निर्णय पारित करते समय उक्त

निर्देश को ध्यान में रखा और बाजार मूल्य पर 12 प्रतिशत अतिरिक्त मुआवजा दिया। भूमि अधिग्रहण अधिकारी के उक्त आदेश पर कभी सवाल नहीं उठाया गया और इस प्रकार, इसे अंतिम रूप दिया गया।

अधिनियम की धारा 18 में प्रावधान है कि कोई भी व्यक्ति जिसने पुरस्कार स्वीकार नहीं किया है, वह मुआवजे की राशि के संबंध में अन्य बातों के साथ- साथ अदालत के निर्धारण के लिए विवाद को संदर्भित करने के लिए आवेदन दायर कर सकता है।

धारा 18 के तहत ऐसा आवेदन दायर कर सकता था। उसने ऐसा करना नहीं चाहा कि यहां केवल अपीलकर्ता ने उक्त प्रावधान का सहारा लिया, जिसके परिणामस्वरूप उच्च न्यायालय का निर्णय पारित हुआ।

इस प्रकार, अतिरिक्त ब्याज के भुगतान का निर्देश देने वाले भूमि अधिग्रहण अधिकारी का निर्णय भी अंतिम हो गया है।

संदर्भित उच्च न्यायालय अधिनियम की धारा 54 के तहत अपने अपीलीय क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए उक्त प्रश्न से निपट नहीं सकता था। रेस ज्यूडिकाटा का सिद्धांत एस्टॉपेल के सिद्धांत की प्रजाति है। जब कार्यवाही के किसी विशिष्ट कारण पर आधारित कार्यवाही अंतिम रूप ले लेती है, तो रेस ज्यूडिकाटा का सिद्धांत पूरी तरह से लागू होगा।

इस संबंध में वेड और फोर्सिथ ऑन एडमिनिस्ट्रेटिव लॉ, 9 वें संस्करण, पृष्ठ का संदर्भ लिया जा सकता है। पेज नं. 243, जिसमें कहा गया है कि " की एक विशेष किस्म रेस ज्यूडिकाटा है। यह उस नियम का परिणाम है जो न्यायिक निर्धारण के पक्षकारों को एक ही प्रश्न पर दोबारा मुकदमा करने से रोकता है, भले ही निर्धारण स्पष्ट रूप से गलत हो। अपील के माध्यम से कार्यवाही को छोड़कर, पक्ष इससे बंधे हैं निर्णय पर सवाल उठाने से रोक दिया गया है। एक दूसरे के बीच के रूप में वे न तो कार्यवाही के एक ही कारण को फिर से आगे बढ़ा सकते हैं, न ही वे किसी भी मुद्दे पर फिर से मुकदमा कर सकते हैं जो निर्णय में एक आवश्यक तत्व था। इन दो पहलुओं को कभी-कभी 'कार्रवाई के कारण' के रूप में प्रतिष्ठित किया जाता है ' और इश्यू एस्टॉपेल'। होप प्लांटेशंस लिमिटेड बनाम तालुक लैंड बोर्ड, पीरमेड और अन्य , (1999) 5 एससीसी 590 में, इस न्यायालय ने कहा:

“भारत में रेस ज्यूडिकाटा और एस्टॉपेल पर कानून अच्छी तरह से समझा जाता है और इन विषयों पर विभिन्न अदालतों द्वारा पर्याप्त आधिकारिक घोषणाएं की गई हैं। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, रेस ज्यूडिकाटा की दलील तकनीकी होने के बावजूद सार्वजनिक नीति पर आधारित है ताकि मुकदमेबाजी को खत्म किया जा सके। हालाँकि, यह

अलग है अगर कोई मुद्दा जो पहले मुकदमे में तय किया गया था वह फिर से कार्यवाही के नए कारण के आधार पर या जहां कार्यवाही का लगातार कारण है, उसी मुकदमे में उन्हीं पक्षों के बीच निर्धारण के लिए उठता है। तब पार्टियां ऐसा कर सकती हैं यदि इस बीच, कानून बदल गया है या किसी उच्च मंच द्वारा अलग ढंग से व्याख्या की गई है, तो पहले किए गए निर्णय से बाध्य न हों।"

जॉर्ज स्पेंसर बोवर और टर्नर द्वारा लिखित 'द डॉक्ट्रिन ऑफ रेस ज्यूडिकेटा के दूसरे संस्करण में कहा गया है:

एक न्यायिक निर्णय को अंतिम माना जाता है, जब इसे प्रभावी और निष्पादन में सक्षम बनाने के लिए न्यायिक रूप से निर्धारित या सुनिश्चित करने के लिए कुछ भी नहीं छोड़ा जाता है और यह पूर्ण, पूर्ण और निश्चित होता है, और जब यह कानूनी तौर पर बाद में रद्दीकरण के अधीन नहीं होता है, समीक्षा, या उस न्यायाधिकरण द्वारा संशोधन जिसने यह फैसला सुनाया। इस संबंध में, राम चंद्र सिंह बनाम सावित्री देवी और अन्य, जेटी (2005) 11 एससी 439 का भी संदर्भ दिया जा सकता है। फिर भी हाल ही में स्वामी आत्मानंद और अन्य बनाम श्री रामकृष्ण तपोवनम और अन्य, जेटी (2005) 4 एससी 472 जिसमें हम में से एक पक्षकार था, इस न्यायालय ने कहा:

“नागरिक प्रक्रिया संहिता की धारा 11 में निहित न्यायिक निर्णय के सिद्धांत का उद्देश्य और तात्पर्य तथ्य, या कानून, या तथ्य और कानून के पहले तय किए गए बिंदुओं के संबंध में निर्णय की निर्णायकता के नियम को बनाए रखना है। समान पक्षों के बीच प्रत्येक वाद के मुकदमे में। एक बार जो मामला लिस का विषय- वस्तु था, एक सक्षम अदालत द्वारा निर्धारित किया गया था, उसके बाद किसी भी पक्ष को बाद के मुकदमे में इसे फिर से खोलने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। ऐसा नियम कानून की किताब में लाया गया था मुकदमे को खत्म करने की दृष्टि से ताकि दूसरे पक्ष को परेशान न होना पड़े।

रेस ज्यूडिकाटा के सिद्धांत की परिकल्पना है कि एक बिंदु पर सीधे समवर्ती क्षेत्राधिकार की अदालत का निर्णय किसी अन्य अदालत में किसी अन्य मामले में समान पक्षों के बीच एक याचिका के संबंध में एक बाधा पैदा करेगा, जहां उक्त याचिका उसी को नए सिरे से उठाना चाहती है। वह बिंदु जो पहले के फैसले में निर्धारित किया गया था।”

यह आगे देखा गया:

ईश्वरदास बनाम मध्य प्रदेश राज्य और अन्य, एआईआर (1979)

एससी 551 में, इस न्यायालय ने कहा:

“न्याय निर्णय की दलील को कायम रखने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि दो मुकदमों के सभी पक्ष एक जैसे हों। केवल इतना आवश्यक है कि मामला उन्हीं पक्षों के बीच या उन पक्षों के बीच होना चाहिए, जिनके अधीन वे या उनमें से कोई भी दावा करता है...”

एक बार फिर अर्नोल्ड बनाम नेशनल वेस्टमिंस्टर बैंक पीएलसी, (1991) 3 ऑल ईआर 41 में, हाउस ऑफ लॉर्ड्स ने कार्रवाई के कारण पर रोक और मुद्दे पर रोक के बीच अंतर पर ध्यान दिया। कार्रवाई का कारण रोकना वहां उत्पन्न होता है जहां बाद की कार्यवाही में कार्रवाई का कारण पिछली कार्यवाही के समान होता है, बाद वाली कार्यवाही एक ही पार्टी या उनके निजी लोगों के बीच होती है और एक ही विषय- वस्तु शामिल होती है। ऐसे मामले में, निर्णय किए गए सभी बिंदुओं के संबंध में रोक पूर्ण है, जब तक कि धोखाधड़ी या मिलीभगत का आरोप नहीं लगाया जाता है, जैसे कि पहले के फैसले को रद्द करने का औचित्य साबित करना। नए तथ्यात्मक मामले की खोज जिसे पिछली कार्यवाही में उपयोग के लिए उचित परिश्रम से नहीं पाया जा सका, इंग्लैंड के कानून के अनुसार, बाद की कार्यवाही को फिर से खोलने की अनुमति नहीं देता है। मुद्दा विबंधन

उत्पन्न हो सकता है जहां कार्रवाई के कारण में एक आवश्यक घटक बनाने वाले एक विशेष मुद्दे पर मुकदमा चलाया गया है और निर्णय लिया गया है और एक ही पक्ष के बीच बाद की कार्यवाही में कार्रवाई का एक अलग कारण शामिल है जिसके लिए एक ही मुद्दा प्रासंगिक है, पार्टियों में से एक चाहता है उस मुद्दे को फिर से खोलें. यहां भी बार पुनः मुकदमेबाजी के लिए पूर्ण है लेकिन कुछ परिस्थितियों में इसके संचालन को विफल किया जा सकता है। सदन ने अंततः टिप्पणी की इस दृष्टिकोण के लिए जगह है कि अंतर्निहित सिद्धांत जिस पर रोक आधारित है, सार्वजनिक नीति और न्याय में कार्रवाई रोक के कारण अधिक बल है, दोनों कार्यवाहियों की विषय- वस्तु उनकी तुलना में समान है। विबंध जारी करने में, जहां विषय- वस्तु भिन्न है। एक बार जब यह स्वीकार कर लिया जाता है कि रोक जारी करने के लिए अलग- अलग विचार लागू होते हैं, तो उस बिंदु के बीच कोई तार्किक अंतर समझना मुश्किल है जो पहले उठाया गया था और निर्णय लिया गया था और जो हो सकता था लेकिन नहीं था। यह देखते हुए कि आगे की सामग्री जो इस मुद्दे पर एक पूरी तरह से अलग जटिलता डाल सकती थी, पहले चरण में पार्टी के लिए अज्ञात थी और उचित परिश्रम से उसके द्वारा खोजी नहीं जा सकी थी, यह देखना मुश्किल है कि इसके अनुसार एक अलग परिणाम क्यों होना चाहिए क्या उसने इस मुद्दे को निराशाजनक मानकर इसे न उठाने का निर्णय लिया, या सफलता की किसी भी वास्तविक आशा के बिना इस पर हल्के ढंग से बहस की।

गुलाबचंद छोटेला ल पारिख बनाम गुजरात राज्य, एआईआर (1965) एससी 1153 में संविधान पीठ ने कहा कि न्यायिक निर्णय का सिद्धांत बाद के मुकदमों पर भी लागू होता है, जहां समान पक्षों के बीच समान मुद्दे अनुच्छेद 226 के तहत पहले की कार्यवाही में तय किए गए थे।

यह सामान्य बात है कि न्यायिक निर्णय का सिद्धांत रिट कार्यवाही पर भी लागू होता है। हिमाचल प्रदेश सड़क परिवहन निगम बनाम बलवंत सिंह देखें, (1993) पूरक 1 एससीसी 552,।

भानु कुमार जैन बनाम अर्चना कुमार और अन्य, (2005) 1 एससीसी 787 में, यह आयोजित किया गया था:

“अब यह अच्छी तरह से तय हो गया है कि न्यायिक न्याय के सिद्धांत एक ही कार्यवाही के विभिन्न चरणों में लागू होते हैं। सत्यध्यान घोषाल और अन्य बनाम श्रीमती देवराजिन देबी और अन्य, एआईआर (1960) एससी 941 और प्रह्लाद सिंह बनाम कर्नल देखें। सुखदेव सिंह, (1987) 1 एससीसी 727,।”

वाईबी पाटिल (सुप्रा) में यह आयोजित किया गया था:

“4... यह अच्छी तरह से स्थापित है कि न्यायिक निर्णय के सिद्धांतों को न केवल अलग-अलग बाद की कार्यवाही में

लागू किया जा सकता है, बल्कि वे उसी कार्यवाही के बाद के चरण में भी लागू होते हैं। एक बार कार्यवाही के दौरान दिया गया आदेश अंतिम हो जाता है, तो यह उस कार्यवाही की अगली स्थिति में बाध्यकारी होगा...“

आगे यह देखा गया:

“हालांकि, इस प्रकृति के मामले में, ‘मुद्दे पर रोक’ का सिद्धांत और साथ ही ‘कार्रवाई पर रोक’ का सिद्धांत भी उत्पन्न हो सकता है।”

वाईबी पाटिल (सुप्रा) ने कहा:

“...कार्रवाई प्रतिबंध का कारण” वह है जो किसी कार्रवाई में शामिल एक पक्ष को दूसरे पक्ष की तुलना में, कार्रवाई के किसी विशेष कारण के अस्तित्व पर जोर देने या इंकार करने से रोकता है, जिसकी गैर- मौजूदगी या अस्तित्व किसके द्वारा निर्धारित किया गया है, समान पक्षों के बीच पिछले मुकदमे में सक्षम है तो वह क्षेत्राधिकार वाला न्यायालय। यदि कार्रवाई का कारण अस्तित्व में नहीं होना निर्धारित किया गया था, अर्थात्, उस पर निर्णय दिया गया था, तो इसे निर्णय में विलय कहा जाता है। यदि यह

निर्धारित किया गया था कि इसका अस्तित्व नहीं है, तो असफल वादी अब यह दावा नहीं कर सकता है कि इसका अस्तित्व है, उसे न्यायिक कार्यवाही से रोक दिया गया है।”

उक्त आदेश का पालन बार्बर बनाम स्टैफोर्डशायर कंट्री काउंसिल, (1996) 2 ऑल ईआर 748 में किया गया था। कार्रवाई का एक कारण उत्पन्न होता है जहां दो अलग-अलग कार्यवाहियों में समान मुद्दे उठाए जाते हैं, ऐसी स्थिति में, बाद की कार्यवाही समान पक्षों के बीच होगी उसी तरह निपटाया गया जैसा पिछली कार्यवाही में किया गया था। ऐसी स्थिति में धोखाधड़ी और मिलीभगत के आरोप को छोड़कर निर्णय किए गए सभी बिंदुओं के संबंध में रोक पूर्ण है। देखें सी. (एक नाबालिग) बनाम हैकनी लंदन बरो काउंसिल, (1996) 1 आल ईआर 973।

देखें द डॉक्ट्रिन ऑफ रेस ज्यूडिकाटा , दूसरा संस्करण। स्पेंसर बोवर और टर्नर द्वारा पी. 149, मामले के इस दृष्टिकोण में, उच्च न्यायालय के पास, हमारी राय में, उपरोक्त प्रश्न पर विचार करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था।

इसके अलावा, जब तक किसी निर्णय को खारिज नहीं किया जाता है या कानून को मान्य करने के माध्यम से कोई कानून लागू नहीं किया जाता है, तब तक मेंडमस का पालन करना आवश्यक होता है।

मदन मोहन पाठक और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य, (1978)

2 एससीसी 50 एआईआर (1978) एससी 803, में, संविधान पीठ ने कहा:

“यहां, कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय, जिस पर याचिकाकर्ताओं ने भरोसा किया है, किसी अधिभार या कर को अमान्य मानने वाला एक घोषणात्मक निर्णय नहीं है, ताकि एक सत्यापन कानून निर्णय में संशोधन द्वारा बताए गए दोष को दूर कर सके। कानून पूर्वव्यापी प्रभाव से लागू होता है और इस तरह के कर को मान्य करता है। लेकिन यह जीवन बीमा निगम को बोनस की राशि का भुगतान करने का निर्देश देने वाले परमादेश की रिट जारी करके निपटान के तहत वार्षिक नकद बोनस के याचिकाकर्ताओं के अधिकार को प्रभावी करने वाला निर्णय है। यदि तथ्यात्मक या कानूनी स्थिति में पूर्वव्यापी परिवर्तन के कारण, निर्णय गलत हो जाता है, तो उपचार अपील या समीक्षा के माध्यम से हो सकता है, लेकिन जब तक निर्णय कायम है, तब तक इसकी अवहेलना या अनदेखी नहीं की जा सकती है और इसका पालन किया जाना चाहिए, जीवन बीमा निगम द्वारा। इसलिए, हमारा विचार है कि, किसी भी स्थिति में, चाहे विवादित

अधिनियम संवैधानिक रूप से वैध है या नहीं, जीवन बीमा निगम कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा जारी मैडसम का पालन करने के लिए बाध्य है तथा तृतीय एवं चतुर्थ श्रेणी के कर्मचारियों को वर्ष 1 अप्रैल 1975 से 31 मार्च, 1976 तक वार्षिक नकद बोनस का भुगतान करना।

किसी भी स्थिति में, न्यायालय द्वारा जारी निर्देशों का अनुपालन किया गया। अधिनियम की धारा 18 को ध्यान में रखते हुए या पुनः नहीं बदला जा सकता था।

हमें यह भी ध्यान देना चाहिए कि उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशों द्वारा उठाया गया प्रश्न उत्तरदाताओं द्वारा नहीं उठाया गया था, हालांकि धरम दास (सुप्रा) में इस न्यायालय के निर्णय के संबंध में यह उपलब्ध था।

हमारी राय में, उच्च न्यायालय के पास हालांकि नागरिक प्रक्रिया संहिता की धारा 107 के संदर्भ में व्यापक शक्ति है, लेकिन वह दलीलों से बाहर जाकर कोई नया मामला नहीं बना सकता है।"

सिद्धू वेंकप्पा देवाडिगा बनाम श्रीमती में, रंगु एस. देवाडिगा और अन्य, 1977, 3 एससीसी 532, यह आयोजित किया गया था:

“8...जैसा कि कहा गया है, प्रतिवादी ने अपने लिखित बयान में उस दावे को दोहराया और दलील दी कि मालिक के रूप में व्यवसाय हमेशा उसका था। इस प्रकार कोई दलील नहीं थी कि व्यवसाय शिवन्ना के लिए “बेनामी” था। हमने यह भी पाया है पार्टियां इस सवाल पर एकमत नहीं हुईं कि व्यवसाय “बेनामी” था। दूसरी ओर, मुद्दा यह था कि क्या शिवन्ना व्यवसाय के मालिक थे और उस परिसर के किरायेदारी के अधिकार थे जहां यह चल रहा था। यह ट्रोजन एंड कंपनी लिमिटेड बनाम आरएम एनएन नागप्पा चेट्टियार और रारुहा सिंह बनाम अचल सिंह मामले में इस न्यायालय द्वारा यह माना गया है कि किसी मामले का निर्णय पक्षकारों के अभिकथनों के बाहर नहीं हो सकता है व अभिकथन किए गए मामले को देखा जाना चाहिए। इसलिए उच्च न्यायालय ने कानून के इस बुनियादी सिद्धांत की अनदेखी करके, और एक पूरी तरह से नया मामला बनाकर गलत किया, जिसके संबंध में अभिकथन नहीं किए गए थे और जो मुकदमे की विषय- वस्तु नहीं था।”

इन कारणों से, अपीलें स्वीकार की जाती हैं, अपीलों के तहत आक्षेपित निर्णयों को अपास्त किया जाता है और संदर्भ न्यायालय के निर्णयों की पुष्टि की जाती है। कोई कोस्ट नहीं।

अपील स्वीकृत।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी अनु अग्रवाल (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।